वंदनीय माता जी के जन्म के समय दिव्यता का आभास

महाशक्ति की लोकयात्रा चैप्टर 1-3

1988 का स्वर्गीय बी आर चोपड़ा जी द्वारा निर्देशित बहुचर्चित मेगा सीरियल का प्रत्येक एपिसोड निम्नलिखित पंक्तियों से आरम्भ होता था। यह वोह समय था जब सड़कों पर एक तरह से कर्फ्यू जैसी स्थिति होती थी,हम सब अपने टीवी स्क्रीन के साथ गोंद की भांति चिपके होते थे। महेंद्र कपूर जी की आवाज़ में यह पंक्तियाँ जो दिव्यता प्रदान करती हैं उसका वर्णन निम्लिखित पंक्तियाँ कर रही हैं।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे

जब जब धर्म की हानि होने लगती है और अधर्म आगे बढ़ने लगता है, तब तब मैं स्वयं की सृष्टि करता हूं, अर्थात् जन्म लेता हूं । सज्जनों की रक्षा एवं दुष्टों के विनाश और धर्म की पुनःस्थापना के लिए मैं विभिन्न युगों (कालों) मैं अवतरित होता हूं ।

श्रद्धेय डॉक्टर प्रणव पंड्या जी द्वारा “महाशक्ति की लोकयात्रा” पुस्तक का Foreword इस श्लोक के अंतिम शब्दों “संभवामि युगे-युगे” से आरम्भ होता है।

परम वंदनीय माता जी के दिव्य जीवन की अमृत कथा दर्शाती है कि प्रभु जब भी अपने संकल्प को पूरा करने के लिए मानव कल्याण हेतु इस धराधाम में अवतरित होते हैं तब उनके साथ उनकी लीला शक्ति का भी नारी रूप में प्रायः इस लोक मे अवतरण होता है। इतिहास पुराण के अनेकों पृष्ठ भगवत्कथा के ऐसे दिव्य प्रसंगों से भरे पड़े हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम के साथ माता सीता आई, लीला पुरुषोत्तम भगवान श्री कृष्ण के साथ माता रुक्मिणी का आगमन हुआ, भगवान बुद्ध के साथ यशोधरा का, चैतन्य महाप्रभु के साथ देवी विष्णुप्रिया का इस लोक में आविर्भाव हुआ। श्रीरामकृष्ण परमहंस देव के साथ माँ शारदा ने अवतार लेकर उनके ईश्वरीय कार्यों में सहायता की। ये सभी महान नारियां एक ही महाशक्ति को दर्शाती विभिन्न कलाओं के रूप में अवतरित हुई और भगवान की अवतार लीला में उनकी सहायक बनी।

वर्तमान युग मे उसी महाशक्ति ने माता भगवती के रूप में अपनी समस्त कलाओं के साथ, संपूर्ण रूप में इस धरालोक पर अवतार लिया। अपनी इस लोकयात्रा में महाशक्ति ने अपने आराध्य वेदमूर्ति तपोनिष्ठ युगऋषि परमपूज्य गुरुदेव के ईश्वरीय कार्य में सहायता करने के साथ हम सबके सामने अनेकों जीवनदर्शन प्रस्तुत किए। आदर्श गृहिणी, आदर्श माता, आदर्श तपस्विनी, आदर्श गुरु का स्वरूप हम सबके समक्ष प्रकट किया। यही नहीं उन्होंने अपने पवित्र और साधना सम्पन्न जीवन के द्वारा भारतीय नारी की गरिमा को भव्य अभिव्यक्ति दी। उन्होंने इस श्रुति वाक्य को अपनी जीवन साधना से सत्य सिद्ध किया कि नारी अबला नहीं शक्तिस्वरूपा है। वह आश्रित नहीं आश्रयदाता है। She is not dependent on anybody rather we depend upon her.

इन पंक्तियों के लेखकों को कई दशकों तक उनके निकटतम रहने का सौभाग्य मिला है। सालों-साल एक ही छत के नीचे उनके साथ हंसना-बोलना, खाना पीना, उसके वात्सल्य का सतत पयपान करते हुए जीना, यहां तक कि उसके महाप्रयाण के क्षण तक उनके पास रहना, उन्हीं की कृपा से संभव हुआ है। उनके साथ व्यतीत किया हर पल अभी भी स्मृतियों में सुरक्षित और संरक्षित है। इस

अमूल्य निधि को अब तो दिन में कई-कई बार खोलकर देखने की आदत-सी पड़ गई है। उन्हें याद करने से एवं गहन साधना से प्राप्त होने वाला आत्मबल निरंतर शांति प्रदान करता है। श्रद्धेय लिखते हैं कि मैंने उनके जीवन को सदा से ही बहुआयामी (multidimensional) देखा है। वह अति सरल-सहज एवं अति रहस्यपूर्ण थीं । लोक मे रहते लए भी वह पूर्णतया अलौकिक थी। संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि उनके जीवन की सम्पूर्ण व्याख्या पूर्णतया असंभव है।

ब्रह्मवर्चस द्वारा संपादित (edited) इस पुस्तक में जो कुछ लिखा गया है वह दृश्य सत्यों (true scenes) का भावपूर्ण संकलन है। हालांकि ये दृश्य-सत्य ऐसे झरोखों की तरह हैं जिनसे अदृश्य बरबस झांकना-झलकता और प्रकट होता है। यदि भक्तिपूर्ण रीति से, श्रद्धा भाव से इसे पढ़ा जाएगा, तो पढ़ने वाले साधना पथ के जिज्ञासुओं के लिए यह पुस्तक एक मार्गदर्शिका है, ऐसा मेरा विश्वास है। परमवंदनीया माताजी की कृपा प्राप्ति के इच्छुक जनों के लिए इस पुस्तक को पढ़ना जैसे सुवर्ण पथ पर चलना है। स्थूल देह में न रहने पर भी असंख्य जन आज भी वंदनीया माताजी की पराचेतना की अनुभूति प्राप्त करते है। सत्य यही है कि वे आज भी

हैं, यही हैं हमारे एकदम आस-पास हैं । मेरा तो यह विश्वास है कि इन क्षणों में इस पुस्तक को थामे हुए जनों के हृदयों में उठ रहे भाव स्पंदनो को वह महसूस कर रही हैं ।

इस पुस्तक को पढ़ना और श्रवण एक श्रेष्ठ साधना :

मातृ शक्ति, वंदनीय माताजी को पुकारने के लिए इस पुस्तक का पठन और श्रवण एक श्रेष्ठ साधना है। “माताजी की लोकयात्रा” के अनेकों ऐसे प्रसंग हैं जो उनकी भावात्मक अनुभूति कराने में समर्थ हैं । योग विज्ञान के विद्यार्थी उनके इन प्रसंगों को पढ़ने व मनन करने से समझ सकेगे कि सच्ची योग साधना क्या होती है। जो भक्त हैं , उनके लिए महाशक्ति की लोकयात्रा का पठन और चिन्तन जीवन-सुधा की तरह है। जिसे जितनी तरह से और जितनी बार पिया जाए, उतनी ही आत्मचेतना को नवस्फूर्ति प्राप्त होती है। वे इस लोक में हम सबके लिए ही आई थी। हमारी अंतर्चेतना को जगाने, इसे ऊपर उठाने, हम सबके जीवन के कष्ट एवं कठिनाईयो से छुटकारा दिलाने के लिए वह अपनी समूची लोकयात्रा में प्रयत्नशील रही। आज जब वह अपने दिव्यधाम में है, तो भी उन्हें

सदा हमारा ही ध्यान रहता है। ऐसी वात्सल्यमयी मां को भक्तिपूर्ण प्रणाम करते हुए मेरी यही प्रार्थना है

प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वर्तिहारिणि त्रैलोक्यवासिनाड्ये लोकाना वरदा भव।। -देवी सप्तशती 11/35

” विश्व की पीड़ा को दूर करने वाली मा! हम तुम्हारे चरणो मे पड़े हुए है। हम प्रसन्न होओ। त्रिलोक निवासियों की पूजनीया परमेश्वरी ! सब लोगों को वरदान दो।” महाशक्तिमयी माताजी से इस प्रार्थना के साथ यह पावन प्रयास अब आपके हाथों में सौंपा जा रहा है। आप सभी पर उनके कल्याणमय आशीषों की सतत वर्षा होती रहे।

हम अपने पाठकों को बताना चाहेंगें कि इस धरती पर वंदनीय माता जी का आगमन बहुत ही अद्‌भुत संयोग था। 20 सितम्बर 1926 का दिन कोई ऐसा वैसा दिन नहीं था। वर्ष 1926 में चार दिव्य संयोग एक साथ घटे थे। यह संयोग थे :

1. आगरा में माताजी का जन्म।

2. आंवलखेड़ा में दादा गुरु के साथ साक्षात्कार यानि परम पूज्य गुरुदेव का आध्यात्मिक जन्म।

3. अखंड दीप का जन्म जो आज तक युगतीर्थ शांतिकुंज में अनवरत मार्गदर्शन प्रदान कर रहा है

और

4. दक्षिण भारत में तपस्या में डूबे महर्षि अरविंद ने घोषणा की कि महाशक्ति का आगमन हो गया है, अब दुनिया बदलेगी।

आइए दिव्य ज्योति के जन्म की चर्चा से पहले "मातृतत्व" के बारे में जानने का प्रयास करें।

माँ एक ऐसा शब्द है जिसकी जितनी भी व्याख्या की जाए कम है। माँ के लिए मातृशक्ति, आदिशक्ति, युगशक्ति, जगजननी और न जाने कौन-कौन से विशेषण प्रयोग किये गए हैं। इस एकाक्षर शब्द "माँ" की उपमा को वर्णन करने के लिए कैसे कैसे उदाहरण दिए गए हैं हम सब इससे भलीभांति परिचित हैं। मातृत्व और मातृतत्व दो अलग-अलग शब्द हैं लेकिन दोनों के पीछे एक ही भावना छिपी है। माँ यशोदा जैसी माताओं से लेकर हमारे आस-पास दृश्य-अदृश्य सभी माताओं में एक ही common तत्व छिपा पड़ा है जिसे मातृतत्व कहते हैं। यही वह मातृतत्व है जो एक प्राणी (इंसान से लेकर जानवरों ,जीव जंतुओं तक) को मातृत्व प्रदान करता है। यही वह तत्व है जो जीवन और जगत् की समस्त संवेदनाओं एवं संभावनाओं का मूल (base) है। सृजन के सभी संवेदन इसी की उर्वरता में अंकुरित होते हैं। सृष्टि की सारी संभावनाएं (possibilities) यहीं से अपनी अभिव्यक्ति पाती हैं। यही वह परम पूर्णता है, जिसके एक अंश से जगत् का विस्तार हुआ है। इस सत्य को वैदिक ऋषियों ने 'एकांशेन जगत् स्थितः ' कहकर

परिभाषित किया गया है। यह सृष्टि की कोख है, जिससे जीवन के विविध रूप जन्में हैं। दार्शनिकों ने इसी को जीवन व जगत् के सभी अनिवार्य तत्त्वों को धारण और पोषण करने वाली मूल प्रकृति कहा है। यही ऋग्वेद में वर्णित आदिमाता अदिति हैं, जो स्वयं अनादि, अनंत, और अविभाज्य रहते हुए सभी लोकों को जन्म और जीवन देती है। अंत में सब इसी में विलीन हो जाते हैं। विश्व-ब्रह्मांड को संचालित करने वाली आदिशक्ति इसी मातृतत्त्व का ही परिचय है।

जब हम मातृतत्व की चर्चा कर रहे हैं तो केवल उस माँ की बात नहीं कर रहे जिसने हमें जन्म दिया है बल्कि पृथ्वी,धरती माँ, सृष्टि,प्रकृति, nature इत्यादि सभी की बात कर रहे हैं, यह सभी स्त्रीलिंग यानि माँ हैं। अगर हम इनके बारे में केवल सरसरी तौर पर ही सोचें तो धरती को धरती माँ कहा जाता है, प्रकृति, सृष्टि को भी इसी प्रकार के विशेषण से सुशोभित किया गया है, उन्हें भी एक माँ की भांति पोषक और प्रेरक की संज्ञा दी गयी है, इनमें भी वही तत्व “मातृतत्व” पाया गया है जो अनंत है यानि जिसका कोई अंत नहीं है ,जो अनादि है यानि आदिकाल से है।

प्रत्येक प्राणी मातृतत्त्व की सजल भावानुभूतियों में जीवन पाता है। उसकी मां ही उसके लिए सब कुछ होती है। उसके हृदय से पहली

पुकार “मां” के लिए उठती है। होठों से पहला शब्द मां
ही निकलता है। सारे रिश्ते-नाते, सारी संबंध-संवेदनाएं मातृत्त्व के इर्द-गिर्द अपना अस्तित्व बुनती हैं। सबके केंद्र में मां ही होती है। यह समझने में किसी को तनिक-सी भी देर नहीं लगेगी कि प्रत्येक शिशु का जीवन मातृमय होता है। मातृतत्त्व ही उसके लिए सुख, सुरक्षा, आनंद एवं प्रेम प्रदान करता है।

परन्तु यह सभी भावानुभूतियां स्थायी नहीं रह पातीं। जैसे-जैसे जीवन यात्रा multidimensional होती जाती है, यह भावानुभूतियाँ धीरे-धीरे विलीन होती जाती हैं। वह संबंध संवेदनाएं दुर्बल होती जाती हैं, जो कभी माता के गर्भ में अपने जीवन को मजबूती से बांधे हुए थीं। जीवन में घमंड और बौद्धिकता आते ही, जन्म देने वाली माता से अलग करा देती है। वह अंश जो कभी माता का अटूट अंश था, स्वयं को परम-पूर्ण समझने की मिथ्या और भ्रम पाल लेता है और माता को, माँ को भूलना शुरू कर देता है। माँ का अंश यह भी भूल जाता है कि विश्व की सारी विद्याएं एवं जगत की सारी स्त्रियां तुम्हारा ही स्वरूप हैं। मातृतत्त्व से विलग होकर जीवन अनजान अंधेरों की भटकन में भटकने लगता है। इस भटकन से उबरने का एक ही उपाय है,

मातृतत्त्व के प्रति सच्चा विश्वास और कामना । जगत् और जीवन को जन्म देने वाली माता के प्रति अटूट अनुराग ।

यही उस महायोग का प्रारंभ बिंदु है, जो जीवन की अपूर्णता को परम पूर्णता की ओर ले जाता है और अपनी चरम परिणति में उसे पूर्णता का वरदान देता है। वैदिक ऋषियों से लेकर महायोगी श्री अरविंद ने इसी पथ का अनुसरण किया है। इस पथ पर चलकर ही वे पूर्णता के वरदान से लाभान्वित हुए। क्या कोई अंश अपनी जननी से अलग होकर exist कर सकता है ? कभी नहीं। सृष्टि से अलग होना असंभव है। जब जब भी इस प्रकार के अलग होने के प्रयास हुए हैं विनाश ही हुआ है।

परमपूज्य गुरुदेव की अनुभूति भी कुछ ऐसी ही है। उन्होंने एक नहीं, अनेक स्थानों पर कहा है कि मातृतत्त्व की साधना ही जीवन को संस्कारित एवं परिष्कृत भाव-विह्वल, वियोग का महातप करने वाली करती है। इसी से जीवन समर्थ एवं शक्तिवान बनता है। इस संबंध में उन्होंने समय-समय पर कुछ विशेष बातें भी बताईं। उन्होंने कहा कि कालप्रवाह में सामान्य एवं असामान्य क्षण प्रवाहित होते रहते हैं।

सामान्य क्षणों में मानव मातृतत्त्व की कामना करता है। माता की परम पूर्णता का बोध पाने के लिए योग साधना में निरत रहता है। ध्यान व ज्ञान की साधना करके आदिमाता से अपने जीवन की पूर्णता का वरदान पाने की प्रार्थना करता है। असामान्य क्षणों में अपनी कोख से जीवन और जगत् को प्रसव करने वाली माता स्वयं यत्नशील होती है। सृष्टि को सुसंस्कारित करने के लिए वह स्वयं युगशक्ति बनकर अवतरित होती है। वह अपनी भटकी हुई संतानों को राह दिखाने के लिए आती है। उसकी दैवी चेतना मानवीय देह से अभिव्यक्त होती है। महादेवी स्वयं मानवी बनकर अपनी असंख्य संतानों को लाड़-दुलार करती है। आदिशक्ति, युगशक्ति का रूप धारण कर सत्पथ का प्रवर्तन करती है। अपनी योगमाया जगन्माता किसी संकेत, इंगित अथवा आदेश से नहीं, बल्कि स्वयं जीवन के सभी आयामों को जीकर तत्त्व और सत्य का बोध कराती है। अपने बच्चों को अंगुली पकड़कर जीवन जीने की कला सिखाती है।

सृष्टि के इतिहास में ये क्षण बड़े ही महिमामय होते हैं। अनगनित परेशान क्षणों की पुकार का उत्तर देने के लिए, करुणामयी माता अवतार लेने के लिए संकल्पित होती है। बड़ा ही भाग्यवान होता है वह देश, धरा का वह आंचल जिसे आदिजननी

अपनी लीलाभूमि के रूप में चुनती है। बड़े ही पुण्यशाली होते हैं वे लोग, जो किसी भी रूप में उनके स्वजन एवं परिजन बनते हैं, इस सब से भी कहीं अधिक धन्य वे होते हैं, जो भक्ति से उफनते अपने हृदयों को माता के चरणों में उड़ेलकर मातृतत्त्व का अर्चन-वंदन करते हैं। वे भी कम पुण्यवान नहीं होते, जो दिव्य जननी की लीला-कथा का स्मरण-चिंतन एवं अवगाहन करते हुए उनकी ज्योतिर्मय चेतना से एकात्म होने की साधना करते हैं।

साधना के भावपूर्ण स्वरों का उत्तर देने के लिए ही तो भावमयी माता भगवती अवतार लेती है, इसीलिए तो मातृतत्त्व की विशुद्ध चेतना घनीभूत होकर स्थूल रूप में प्रकट होती है। मानव की जन्म-जन्मांतर की आध्यात्मिक कामनाओं का उत्तर देने के लिए ही मातृतत्त्व की दिव्य ज्योति जन्म लेती है। उसके प्रकाश से लोकों के बाहरी आवरण ही नहीं, जीवों के अंतःकरण भी प्रकाशित होते हैं। युगशक्ति के अवतरण से हवाओं में अलौकिक सुगंध फैलने लगती है। आदिशक्ति की दिव्य ज्योति के जन्म का महोत्सव मनाने के लिए ऋषि, देवता एवं सिद्धगण सक्रिय होने लगते हैं। सृष्टि की समस्त दिव्य शक्तियों में एक अनोखी चेतनता व्याप्त हो जाती है।

दिव्य ज्योति के जन्म की शुभ घड़ी समीप आने लगी थी।

सांवरिया बोहरे समुदाय (आगरा) के पं. जसवंतराव शर्मा के परिवार में इसके स्पंदन तीव्रगति से संघनित होने लगे थे। घर के वातावरण में दिव्यता की कुछ अलग-सी तरंगें हर क्षण तरंगित होती रहतीं। एक अलौकिक महक मकान के कोने, चौबारे व आंगन में रह रह कर सघन हो उठती। परिवार के सभी सदस्यों के मन, अंतःकरण में उल्लास उमगता रहता। एक अनजानी खुशी हर एक को घेरे थी।

पिछले कुछ महीनों से होने वाले इन परिवर्तनों को सबसे पहले जसवंतराव जी ने महसूस किया। जसवंतराव बड़े ही सीधे-सरल स्वभाव वाले आध्यात्मिक प्रकृति के व्यक्ति थे। उनकी सहधर्मिणी रामप्यारी शर्मा पति के अनुरूप जीवनयापन करने वाली भक्तिमती महिला थीं। उनकी कोमलता व सेवापरायणता की घर परिवार के लोग, स्वजन-संबंधी और कुटुंबी बड़ाई करते नहीं थकते थे। आस-पड़ोस की बड़ी-बूढ़ी महिलाएं बात-बात में उनका उदाहरण दिया करती थीं। जब-तब वे आपस की चर्चाओं में कहा करती, "देखो, जसवंतराव की बहु को, घर-परिवार और बच्चों को कितनी अच्छी

तरह से संभालती है और फिर पूजा पाठ और जप-तप भी कितना करती है। प्रशंसा के इन स्वरों में यथार्थ की सार्थकता थी।

इस ब्राह्मण दंपत्ति के पुण्य चरित्र और तपपरायणता को देखकर ऐसा प्रतीत होता था, मानों ये प्राचीनकाल के सुतपा और पृश्नि हैं (वासुदेव और देवकी के पूर्व जन्म)। माता भगवती की उपासना-आराधना दोनों को ही परमप्रिय थी। जसवंतराव नित्य-नियम से देवी सप्तशती का संपूर्ण पाठ किया करते थे। उनका घर-आंगन प्रतिदिन जगन्माता के महिमागान से मुखरित होता था। सप्तशती के संपूर्ण पाठ के साथ गायत्री मंत्र पर उनकी गहन आस्था थी। जप करते हुए वह भावलीन हो जाते थे। देवी सप्तशती के पाठ के समय प्रायः रोज ही उनकी आंखों से भावबिंदु झरने लगते। यदा-कदा रामप्यारी अपने पति से उनके इन भावाश्रुओं के बारे में पूछ लेती। प्रश्न के उत्तर में वह गदगद हो कहते,

“जब मैं पाठ करता हूं, तब मुझे लगता है कि मां छोटी बालिका के रूप में मेरे पास बैठी है। मंत्र जप करते समय भी ऐसा ही लगता है। कभी-कभी तो ऐसा लगने लगता है कि छोटी बालिका के रूप में मां मेरी गोद में आकर बैठ गई है।”

पति की इन बातों को सुनकर रामप्यारी भावमग्न हो जाती। उन्हें इस तरह चुप बैठा हुआ देखकर जसवंतराव पूछ बैठते, "तुम चुप क्यों हो गई?" एक-दो बार पूछने पर वह धीरे से कहती, "आजकल मुझे भी बड़े विचित्र सपने आने लगते हैं। अभी एक-दो दिन पहले ही मैंने सपना देखा कि मैं हिमालय पर हूँ , हिम शिखर बड़े ही भव्य लग रहे थे। तभी उन हिम शिखरों पर एक देवी प्रकट हुई, सचमुच हीवह देवी थी । धीरे-धीरे वह छोटी-सी लड़की बनकर मेरा हाथ पकड़कर बोली, "मां, मैं तुम्हारे घर आने वाली हूं।" एक सपना तो मैंने आज ही देखा:

"सपने में छोटी-छोटी 8 लड़कियां देखीं, एक बड़ी प्यारी-सी लड़की को अपने साथ लेकर मेरे पास आई हैं और मुझसे कह रही हैं, हम सब इसको तुम्हें देने आई हैं। आज से तुम ही इसकी मां हो, साथ ही हमारी मां भी हो, क्योंकि हम सब तो इसी की अंश हैं।"

पत्नी की इन बातों को सुनकर जसवंतराव कुछ पलों के लिए अंतर्लीन हो गए। उन्हें पत्नी के गर्भवती होने की बात पता थी, परंतु ये स्वपन उन्हें गर्भ की दिव्यता के सूचक लग रहे थे। घर के वातावरण में भी आध्यात्मिक बदलाव के चिह्नों को वह काफी दिनों से अनुभव कर रहे थे। उन्हें लग रहा था कि उनके जीवन में

कोई दिव्य घटना घटित होने वाली है। उन्हें इस तरह सोच में डूबा हुआ देख रामप्यारी बोलीं, तुम चुप क्यों हो? कुछ कहते क्यों नहीं? पत्नी के इन प्रश्नों से उनके चिंतन की कड़ियां झंकार के साथ बिखर गई। वह अपने भावों से उबरते हुए रामप्यारी से बोले:

"मुझे लगता है, इस बार माता भगवती जगदंबिका स्वयं हम पर, तुम पर,हमारे पूरे परिवार पर कृपा करने के लिए अवतीर्ण हो रही हैं।"

जसवंतराव की इन बातों को सुनकर रामप्यारी भाव-विह्वल हो गईं। उनकी आंखें छलक उठीं। उन्होंने मन-ही-मन आदिमाता जगदंबा को प्रणाम किया और उठ खड़ी हुईं। अभी उन्हें घर के बहुत सारे काम करने थे, लेकिन आज वह घर के काम को करते हुए महसूस कर रही थीं कि उनके भीतर एक आनंद की अद्‌भुत धारा मंदगति से बह रही है। इससे उनका रोम-रोम, अस्तित्व का अणु-अणु भीग रहा है। काम करते हुए बीच-बीच में उन्होंने अपने दोनों बेटों दीनदयाल एवं सुनहरी लाल और बेटी ओमवती को भरपूर प्यार किया। शायद वह अपने भीतर उमड़ती-उफनती आनंद-सरिता के प्रवाह को अपने बच्चों में भी उड़ेलना चाहती थीं।

रात को सोते समय दिव्य भावानुभूतियों ने उन्हें फिर घेर लिया। उन्हें लगा कि दिव्य लोकों के देवगण, देवियां, सूक्ष्मशरीरधारी ऋषि और सिद्धजन उनके गर्भ पर पुष्पवृष्टि कर रहे हैं। अब यह किसी एक दिन की बात नहीं, नित्य का क्रम हो गया था। गर्भ की अवधि ज्यों-ज्यों पूर्णता की ओर बढ़ रही थी, ये भावानुभूतियां भी उत्तरोत्तर सघन होती जा रही थीं। उनके प्राणों में पुलक बढ़ती जा रही थी। उनकी निर्मल अंतर्चेतना और अधिक उज्ज्वल दीप्ति से प्रकाशित होती जा रही थी।

कालचक्र की बढ़ती गति के साथ वह दिव्य मुहूर्त आ गया, जिसे देवों और ऋषियों ने निश्चित किया था, जिसकी प्रतीक्षा जसवंतराव एवं रामप्यारी को ही नहीं, संपूर्ण विश्व मानवता को थी। आश्विन कृष्ण तृतीया वर्ष 1926 की 20 सितंबर को प्रातः 8 बजे के लगभग दिव्य ज्योति ने जन्म ले लिया। जसवंतराव शर्मा उस समय देवी के नवार्ण मंत्र का जप कर रहे थे। उनके ध्यान में माता की छवि प्रत्यक्ष थी। उनके हृदय की गहराइयों में उपस्थित आदिमाता उन्हें आशीष दें रही थी। तभी उनके कानों में किसी वृद्ध महिला के ये शब्द सुनाई पड़े कि लेडी लायल अस्पताल में ठीक

आठ बजे कन्या जन्मी है लेकिन आश्चर्य, अस्पताल के इस समाचार के साथ उनके हृदय में कुछ और भी गूंज उठा।

उन्होंने बड़ी ही स्पष्ट रीति से अपने हृदय में श्री देव्यथर्वशीर्षम् की यह मंत्र ध्वनि सुनी,

“अहमानन्दान्दो अहं विज्ञानाविज्ञाने । अहं ब्रह्माब्रह्माणी वेदितव्ये । अहं पञ्चभूतान्यपञ्चभूतानि । अहमखिलं जगत् अर्थात “मैं आनंद और आनंदरूपा हूं। मैं विज्ञान और अविज्ञानरूपा हूं। अवश्य जानने योग्य ब्रह्म और अब्रह्म भी मैं ही हूं। पंचीकृत और अपंचीकृत महाभूत भी मैं ही हूं। यह सारा दृश्य जगत् मैं ही हूं।"

इस स्पष्ट मंत्र ध्वनि को अपनी अंतर्चेतना में सुनकर जसवंतराव को यह साफ हो गया कि आदिमाता ने आगमन के साथ ही उन्हें अपना परिचय दे दिया है। वह आदिमाता को प्रणाम करके पूजा के आसन से उठे और कपड़े बदलकर लेड़ी लायल अस्पताल की ओर चल पड़े। उन्हें अपने ज्योतिष ज्ञान की भी सार्थकता सिद्ध करनी थी।

****